मोहि कहाँ विश्राम

अयोध्या से मेरा निजी, सांस्कृतिक, धार्मिक और भावनात्मक रिश्ता रहा है। बाप-दादा वहीं के रहने वाले थे, इसलिए अयोध्या मेरे संस्कारों में है। वह मन से उतरती नहीं। अयोध्या मेरे लिए श्रद्धा का वह स्तर है कि मेरी दादी कभी अयोध्या नहीं कहती थीं। उनके मुँह से हरदम 'अयोध्या जी' ही निकलता था।

इस निकटता में मैंने अयोध्या को एक झाँकी या चलचित्र की तरह घटते या गुजरते देखा है। मैंने जो भी देखा, महसूस किया, उसे ईमानदारी से, बेधड़क होकर लिखा है। मैंने उस दौर को भोगा है। अयोध्या मेरा भोगा हुआ यथार्थ है। इस किताब में मेरी कोशिश उन सभी घटनाओं को दर्ज करने की रही है, जिनका मैं साक्षी रहा हूँ। आग्रह-दुराग्रह से परे, जो देखा, सब लिख दिया।

अपना यह दावा बड़बोलापन होगा कि यह किताब अयोध्या के सच का सौ टका शुद्ध दस्तावेज होगी। बावजूद इसके मैंने अपनी सोच और संकल्प में यह ठाना, कि हर उस पहलू पर लिखा जाए, जो अयोध्या के सच का प्रामाणिक रिकॉर्ड बने। समसामयिक घटनाओं का ब्योरा महज एक पहलू है, मैंने उसके पीछे की राजनीति और नेताओं की नीयत को भी उधेड़ने का काम किया है। ऐसा करना घटनाओं का 'पोस्टमार्टम' करना होगा। इस पहलू को भी पूरी निष्पक्षता से अंजाम देने की कोशिश की है। इन सबसे इतर किताब में अयोध्या का वह आईना भी है, जो तारीखों के साथ ही पुरातत्त्व के इतिहास को भी लिए हुए है। यह इतिहास अयोध्या के भीतर ही कहीं खोया हुआ था। आप इस बात को मानें, न मानें, पर पुरातत्त्व की पड़ताल ने ही अयोध्या विवाद की जमीनी वास्तविकताओं को उधेड़ा है। यह पड़ताल इतिहास के अलग-अलग कालखंडों के सच की दास्ताँ लिए हुए है। अयोध्या सत्ता का नहीं, हिंदू आस्था का केंद्र भी है। तो इस केंद्र में वक्त के साथ क्या-क्या घटा? आस्थावान कैसे जीते?

जीतते-जीतते उनमें क्या परिवर्तन हुआ? वक्त की चुनौतियों के आगे आस्था कैसे अटूट रही? इन सबका एक शब्दचित्र पुरातत्त्व की जाँच और इतिहास के मान्य साक्ष्यों से निकलकर सामने आता है। काम मुश्किल था, पर मैंने कोशिश की। अयोध्या के सच को इतिहास, वर्तमान और भविष्य के कालखंड में इस तरह लिखा जाए कि वह एक प्रामाणिक दस्तावेज बने।

अयोध्या को लंबे समय तक विवादित ढाँचे के तीनों गुंबदों से ही जाना जाता रहा है। मगर सिर्फ ये तीन गुंबद अयोध्या का सच नहीं हैं। बाबरी ढाँचे को ढहाए जाने के साथ ही तीनों गुंबद अब स्मृतिशेष रह गए हैं। अयोध्या का सच इससे अलग है। यह सच भारत की विरासत, परंपरा, सांस्कृतिक इतिहास और धार्मिक मूल्यों में गहरे तक धँसा हुआ है। अयोध्या वीतरागी है। अयोध्या निस्पृह है। अयोध्या में बह रही सरयू के पानी में भी एक तरह की निसंगता है। भक्ति में डूबी अयोध्या का चरित्र अपने नायक की तरह ही धीर, शांत और निरपेक्ष है। अयोध्या एक लक्षण है, मजहबी असहिष्णुता के विरुद्ध प्रतिकार का। अयोध्या एक प्रतीक है, भारत राष्ट्र के आहत स्वाभिमान का। अयोध्या एक संकल्प है, अपनी प्राचीन सांस्कृतिक धरोहर से हर कीमत पर जुड़े रहने का। अयोध्या शमशीर से निकली उस विचारधारा का प्रतिकार है, जो सर्वपंथ समादर, सर्वग्राही और उदार सहिष्णुता के भारतीय आदर्शों को स्वीकार नहीं करती। उसे कुचलती जाती है।

अयोध्या का मतलब है, जिसे शत्रु जीत न सके। युद्ध का अर्थ हम सभी जानते हैं। योध्य का मतलब, जिससे युद्ध किया जा सके। मनुष्य उसी से युद्ध करता है, जिससे जीतने की संभावना रहती है। यानी अयोध्या के मायने हैं, जिसे जीता न जा सके। पर अयोध्या के इस मायने को बदल विजेता की तरह ये तीन गुंबद राष्ट्र की स्मृति में दर्ज हैं।

अयोध्या का मतलब है, जिसे शत्रु जीत न सके। युद्ध का अर्थ हम सभी जानते हैं। योध्य का मतलब जिससे युद्ध किया जा सके। मनुष्य उसी से युद्ध करता है, जिससे जीतने की संभावना रहती है। यानी अयोध्या के मायने हैं, जिसे जीता न जा सके। पर अयोध्या के इस मायने को बदल ये तीन गुंबद राष्ट्र की स्मृति में विजेता की तरह दर्ज हैं। ये गुंबद हमारे अवचेतन में शासक बनाम शासित का मनोभाव बनाते हैं। पिछले सौ वर्षों से देश की राजनीति इन्हीं गुंबदों के इर्दगिर्द घूम रही है। आजाद भारत में अयोध्या को लेकर बेइंतहा बहसें हुईं। सालोसाल 'नैरेटिव' चला, पर किसी ने उसे बूझने की कोशिश नहीं की। सब कुछ इन्हीं गुंबदों के इर्दगिर्द घटता रहा। अब भी घट रहा है। हालाँकि गुंबद अब नहीं हैं, पर उसकी धुरी जस की तस है। इस धुरी की तीव्रता, गहराई और उसके सच को पकड़ने का कोई बौद्धिक अनुष्ठान कभी नहीं हुआ, जिसमें इतिहास के साथ-साथ वर्तमान और भविष्य को जोड़ने का माद्दा हो। ताकि इतिहास के तराजू पर आप सच-झूठ का निष्कर्ष निकाल सकें और उन तथ्यों से दो-दो हाथ करने के प्रामाणिक, ऐतिहासिक और वैधानिक आधार के भागी बनें।

अयोध्या में 6 दिसंबर, 1992 को जो कुछ हुआ, वह किसी भी हिंदू परंपरा में मान्य और प्रतिष्ठित नहीं है। पर वह हुआ क्यों? इस पर विचार करने को भी हमारे हुक्मरान तैयार नहीं हैं। कोई इसे बूझना भी नहीं चाहता कि इस आक्रोश की जड़ें कहाँ हैं। सिवाए इसके कि राजनैतिक दल ध्वंस के लिए एक-दूसरे को जिम्मेदार ठहराते हैं। इतिहास की गहराई में थोड़ा सा उतरते ही यह तस्वीर भी साफ होने लगती है। 1934 में हिंदुओं की एक विशाल भीड़ ने बाबरी मस्जिद के तीनों गुंबद तोड़ दिए थे। फैजाबाद के अंग्रेज कलेक्टर ने बाद में इनका पुनर्निर्माण करवाया। उस वक्त हिंदू भावनाओं को भड़काने के लिए विश्व हिंदू परिषद अस्तित्व में भी नहीं थी। इससे पहले भी 1855 में अयोध्या में भारी संघर्ष हुआ। नवाब वाजिद अली शाह की एक रिपोर्ट के मुताबिक 12 हजार लोगों ने ढाँचे को घेर लिया। यह संघर्ष खूनी था। 70 मुसलमान मारे गए। ढाँचे का एक हिस्सा फिर गिरा। उस वक्त तो आरएसएस का जन्म भी नहीं हुआ था। कोई चुनाव भी सामने नहीं था। यानी इन गुंबदों को लेकर आक्रोश हर काल में था। पर किसी ने उसे समझने और सुलझाने की कोशिश नहीं की। दरअसल यह चुनाव की राजनीति नहीं, दो विचारधाराओं का टकराव था, जिसमें एक—विचारधारा, उपासना स्वातंत्र्य, सर्वपंथ समभाव, पंथनिरपेक्षता पर टिकी थी। तो दूसरी—मजहबी एकरूपता, धार्मिक विस्तारवाद और असहिष्णुता पर टिकी थी।

1934 में हिंदुओं की एक विशाल भीड़ ने मस्जिद के तीनों गुंबद तोड़ दिए थे। फैजाबाद के अंग्रेज कलेक्टर ने बाद में इनका पुनर्निर्माण करवाया। उस वक्त हिंदू भावनाओं को भड़काने के लिए विश्व हिंदू परिषद अस्तित्व में भी नहीं थी। इससे पहले भी 1855 में अयोध्या में भारी संघर्ष हुआ। 70 मुसलमान मारे गए। ढाँचे का एक हिस्सा फिर गिरा। उस वक्त तो आरएसएस का जन्म भी नहीं हुआ था।

राम, कृष्ण और शिव भारत में पूर्णता के तीन महान स्वप्न हैं। तीनों का रास्ता अलग-अलग है। डॉ. राममनोहर लोहिया को मैं अपने जमाने का सबसे बड़ा 'सेकुलर' मानता हूँ। उनका जन्म भी फैजाबाद में हुआ था। वे कहते थे, "राम की पूर्णता मर्यादित व्यक्तित्व में है, कृष्ण की उन्मुक्त और शिव असीमित व्यक्तित्व के स्वामी है। मैं जानता हूँ, इस देश का मानस गढ़ने में राम, कृष्ण और शिव की भूमिका रही है।··· देश के सांस्कृतिक इतिहास में यह निरर्थक बात है, भारतीय पुराण के ये महान लोग धरती पर पैदा हुए भी या नहीं।··· राम हिंदुस्तान की उत्तर-दक्षिण एकता के देवता थे।" लेकिन दुर्भाग्य देखिए, लोहिया के चेले यह नहीं समझ पाए और वे आडवाणी से लड़ते-लड़ते राम से लड़ने लगे। अगर वामपंथी मित्रों ने भी लोहिया और गांधी की नजर से राम को देखा होता तो वे अयोध्या आंदोलन के मर्म को आसानी से समझ लेते।

अयोध्या के इन गुंबदों का ध्वंस देश को भीतर तक हिला गया। मैं इस ध्वंस का साक्षी रहा। ध्वंस की रणनीतियों से लेकर ढाँचा बचाने की खोखली कोशिशों का गवाह